International Advance Journal of Engineering, Science and Management (IAJESM)
ISSN -2393-8048, January-June 2018, Submitted in May 2018, iajesm2014@gmail.com

दलित विमर्श और "दलित देवो भवरू"

डॉ सुमन बाला, सहायक आचार्या (हिंदी), डॉ मोहन लाल पीरामल बालिका पी जी महाविद्यालय, बगड़, झुंझुनू

सार

साहित्य का उद्देश्य ही समाज का कल्याण होना चाहिए । मतलब जिस साहित्य में 'बहुजन हिताये और बहुजन सुखायें का भाव होता है, वही साहित्य समाज को एक नई दिशा दिखा सकता है । समकालीन हिन्दी दलित साहित्य क्षेत्र में साहित्यकार का अपना महत्वपूर्ण स्थान है। उन्होंने अपने जीवन के भोगे हुए यथार्थ को बड़ी ताजगी के साथ रचनाओं में अंकित किया है। उन्होंने अपनी रचनाओं में दलित समाज के बच्चे, बूढ़े, युवा–युवतियों, सभी वर्ग का प्रतिनिधित्व बड़ी क्षमता के साथ किया है। उनकी कहानियाँ यथार्थ के धरातल पर समाज का प्रतिनिधित्व करने के साथ दलित चेतना के विकास में भी सक्षम है। उनकी रचनाएँ स्वानुभूतियों का जीवंत दस्तावेज है। उन्होंने स्वयं सामाजिक विषमता का जहर पिया है, परिमाणतः दलित यातना से रूबरू कराती उनकी रचनाएँ प्रबल आक्रोश के रूप में फूट पड़ती है। दबी–कुचली मानवीय संवेदना को आंदोलित करती है और उन्हें क्रान्ति की पहल द्वारा अपनी समस्याओं का समाधान तलाशने में प्रेरित करती है।

परिचय

साहित्य एवं समाज–परिभाषा और स्वरूप

साहित्य और समाज का गहरा संबंध है । वे एक–दूसरे पर निर्भर है ।

कोई भी समाज वर्ग, संस्कृति, धर्म, लिंग और जाति के रूप में अपने अपरिहार्य और समन्वय तत्वों के साथ संरचित होता है। कुछ समाज धर्म, जाति और नस्ल को उन श्रेणियों के रूप में मानते हैं जो पदानुक्रमित क्रम से संबंधित हैं, जबकि अन्य समाज संस्कृति और लिंग पर बहुत अधिक विचार कर सकते हैं। समाज में चाहे कोई भी प्रमुख तत्व क्यों न हो, महिलाओं की स्थिति हमेशा दोयम दर्जे की ही रह जाती है। जैसा कि कई तर्क देते हैं, महिलाओं का उत्पीड़न केवल उनके जीव विज्ञान द्वारा निर्धारित नहीं होता है। इसकी उत्पत्ति चरित्र में सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक है। पूर्व–वर्गीय और वर्गीय समाज के विकास के दौरान, महिलाओं का प्रजनन कार्य हमेशा एक जैसा रहा है। उनकी सामाजिक स्थिति हमेशा एक पतित घरेलू नौकर की रही है, जो मनुष्य के नियंत्रण और आदेश के अधीन है। भारत जैसे मध्यम वर्ग और बुर्जुआ समाज के परंपरा–बद्ध और पारंपरिक माहौल में, महिलाओं को हमेशा घरेलू, सामाजिक, भावनात्मक, जैविक, आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, मनोवैज्ञानिक और भाषाई रूप से भी पुरुषों से हीन समझा जाता है। भारत के विपरीत, अमेरिका जैसे विकसित समाज में, महिलाओं की अधीनता डिग्री और प्रकार में भिन्न होती है। अश्वेत महिलाओं को जिस नस्लीय पीड़ा का सामना करना पड़ रहा है, वह दुनिया भर में किसी भी अन्य महिला समूह के अनुभवों में नहीं हो सकता है।

समाज ने विशेष रूप से महिलाओं के लिए कुछ मानदंड और आज्ञाएँ निर्धारित की हैं, जिन्हें वर्षों से बदला या मौलिक रूप से नहीं बदला गया है। किसी भी समाज की महिलाओं से अपेक्षा की जाती है कि वे समाज द्वारा दी जाने वाली भूमिकाओं से खुद को आकार दें, और उन्हें विभिन्न मिथकों और महाकाव्यों के माध्यम से उन्हें दी गई सामाजिक और सांस्कृतिक रूप से परिभाषित आदर्श छवियों के अनुसार जीवित रहना होगा। अधिकांश छवियां महिलाओं को निष्क्रिय पीड़ित के रूप में दिखाती हैं, मौन में प्रदर्शन करती हैं, बेटियों के रूप में, बहनों के रूप में, पत्नियों के रूप में, माताओं के रूप में और दादी के रूप में उनकी भूमिका। इस अस्तित्व के संघर्ष में, कभी–कभी महिलाएं केवल आत्माहीन जीव बन जाती हैं। उत्पीड़न के इन सूक्ष्म रूपों का विरोध करने के लिए उन्हें कभी–कभार समय मिल जाता है। वर्तमान अध्याय सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक मोर्चों पर टोनी मॉरिसन और बामा की महिला पात्रों के विभिन्न उत्पीड़नों का पता लगाने

का प्रस्ताव करता है। अध्याय का आशाजनक उद्देश्य समाज के उन प्रथागत और स्थापित कोडों और पूर्वाग्रहों की तलाश करना है जो केवल महिलाओं को बाधित और परेशान करते हैं। हालाँकि, मॉरिसन और बामा दो सबसे दूर के सामाजिक परिवेश से संबंधित हैं, लेकिन उनकी महिला चरित्रों पर जो अत्याचार होते हैं, वे कमोबेश एक जैसे ही प्रतीत होते हैं।
महिलाओं के रूप में, उनकी दुर्दशा या तो गोरों के बीच अश्वेतों के समाज में होती है, या उच्च वर्गों और जातियों के बीच दलितों के समुदाय में। इन महिला पात्रों के अधीनता और उत्पीड़न के पीछे का तर्क मौजूदा सामाजिक स्थिति और पारंपरिक सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में गहराई से निहित है। हालाँकि, उत्पीड़न को मिश्रित शीर्षों के तहत वर्गीकृत किया जा सकता है जैसे) घरेलू इ) आर्थिक ब) राजनीतिक और वैचारिक क) सांस्कृतिक और धार्मिक, और म) नस्लीय / जाति उपरोक्त उल्लिखित उत्पीड़नों को इस तरह से क्लस्टर, जटिल और आपस में जोड़ा जाता है कि दुनिया में खुद को प्रतिष्ठित इंसान के रूप में स्थापित करने के लिए महिलाएं इन दमनकारी बाधाओं से कई बार टकराती हैं।
कभी–कभी, वे अपने प्रतिरोध और निरंतर संघर्ष के बावजूद, अपनी क्षमता का पता लगाने में विफल रहते हैं, और दुःख और शोक में डूब जाते हैं। महिलाओं के लिए सामाजिक व्यवस्था इतनी कठोर है कि उन्हें सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में छोटे से छोटे लाभ के लिए भी संघर्ष करना पड़ता है।

साहित्य एवं सामजिक चेतना का तात्पर्य

साहित्य समाज से भाव सामग्री और प्रेरणा ग्रहण करता है तो वह समाज को दिशाबोध देकर अपने दायित्व का भी पूर्णतः अनुभव करता है। परमुखापेक्षीता से बचाकर उनमें आत्मबल का संचार करता है।
प्रेमचंद का किसान–मज़दूर चित्रण उस पीड़ा व संवेदना का प्रतिनिधित्व करता है जिनसे होकर आज भी अविकसित एवं शोषित वर्ग गुज़र रहा है। साहित्य में समाज की विविधता, जीवन–दृष्टि और लोककलाओं का संरक्षण होता है। साहित्य समाज को स्वस्थ कलात्मक ज्ञानवर्धक मनोरंजन प्रदान करता है जिससे सामाजिक संस्कारों का परिष्कार होता है। रचनाएँ समाज की धार्मिक भावना, भक्ति, समाजसेवा के माध्यम से मूल्यों के संदर्भ में मनुष्य हित की सर्वोच्चता का अनुसंधान करती हैं। यही दृष्टिकोण साहित्य को मनुष्य जीवन के लिये उपयोगी सिद्ध करते हैं।
साहित्य की सार्थकता इसी में है कि वह कितनी सूक्ष्मता और मानवीय संवेदना के साथ सामाजिक अवयवों को उद्घाटित करता है। साहित्य संस्कृति का संरक्षक और भविष्य का पथ–प्रदर्शक है। संस्कृति द्वारा संकलित होकर ही साहित्य 'लोकमंगल' की भावना से समन्वित होता है। सुमित्रानंदन पंत की पंक्तियाँ इस संदर्भ में कहती है कि–

वही प्रज्ञा का सत्य स्वरूप
हृदय में प्रणय अपार
लोचनों में लावण्य अनूप
लोक सेवा में शिव अविकार।

हिन्दी साहित्य में सामाजिक चेतना का अर्थ व स्वरूप

'चेतना' शब्द बुद्धि ज्ञान, मनोवृत्ति, स्मृति, सुधि, संज्ञा होश आदि अर्थों में प्रयुक्त होता है।
किसी भी तरह के जुल्म की जड़ परिवार संगठन से ही निकलती है। किसी भी समाज में परिवार सभ्यता का मूल आधार होते हैं। किसी भी परिवार में मूल रूप से दो अनिवार्य सदस्य, एक पुरुष और एक महिला या तो पिता और माता के नाम पर, या पति और पत्नी के नाम पर हो सकते हैं। चाहे वह माँ हो या पत्नी, महिला की भूमिका परिवार के पुरुष सदस्य के अधीनस्थ के रूप में क्रमादेशित होती है। यदि एक महिला पत्नी होती है, तो उसे एक छाया के रूप में माना जाता है, जो पति के साथ–साथ चलती है और

कभी–कभी वफादारी और भक्ति के साथ पति का पालन करती है। यदि वही महिला माँ बनती है, तो उसे स्नेही, देखभाल करने वाला, विचारशील और परिवार के सदस्यों के प्रति प्यार करने वाला, घर के कामों का कर्तव्य निभाने वाला होना चाहिए। घर वह जगह है जहां हर इंसान शांति और संतोष चाहता है। इसके विपरीत ज्यादातर महिलाओं को पीड़ा का सामना करना पड़ता है। सभी संस्कृतियों में, सभी समाजों में घरेलू उत्पीड़न एक स्पष्ट घटना है। महिलाओं को आजादी देने के बजाय, घरेलू क्षेत्र उन्हें ष्अच्छी गृहिणीष्, ष्घरेलू देवीष्, ष्आदर्श पत्नीष् और ष्आदर्श माँष् जैसी विभिन्न आकर्षक उपाधियों में उत्पीड़न की बेड़ियों में जकड़ देता है। कैद में होने के कारण, यह स्पष्ट है कि टोनी मॉरिसन और बामा की महिला पात्रों ने स्वतंत्रता में भागने का प्रयास भी नहीं किया। एक महिला को हमेशा अपने घरेलू कर्तव्यों के बारे में जागरूक होना चाहिए, और ज्यादातर समय अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियों को पूरा करने में लगा रहना चाहिए। निरपवाद रूप से, उन्हें घरेलूता की देवी के रूप में सराहा जाता है । एक परिवार में एक महिला की अनुमानित पुरुष छवियों को मिथकों, कल्पनाओं और सामाजिक छवियों के साथ मिश्रित किया जाता है जो अक्सर महिलाओं के विशिष्ट लक्षणों को व्यक्तियों के रूप में छिपाने की प्रवृत्ति रखते हैं।

समाज की परिकल्पनाः

समाज व्यक्तियों अथवा परिवारों का एक ऐसा संगठन है जिसमें स्वहित की कामना से तथा समान उददेश्यों एवं आदर्शों की प्राप्ति के लिए व्यक्ति अथवा परिवार स्वेच्छापूर्वक सहयोग देते है।

पुरुषों की तुलना में महिलाओं के घरेलू उत्पीड़न का शिकार होने की संभावना बहुत अधिक है। महिलाओं के खिलाफ घरेलू हिंसा का एक बहुत बड़ा अनुपात होता है, और यह हिंसा एक रोजमर्रा की सच्चाई होने के अलावा महिलाओं के उत्पीड़न का एक पहलू है।

महिलाओं के खिलाफ घरेलू दुश्मनी का उच्च स्तर एक ऐसे समाज की पदानुक्रमित संरचना के कारण होता है जो शक्ति की पूजा करता है और पुरुषों और महिलाओं के बीच मौजूद असमान शक्ति संतुलन के कारण होता है। जो पुरुष घर में महिलाओं के खिलाफ हिंसा का इस्तेमाल करते हैं, वे ऐसा इसलिए करते हैं क्योंकि वे समाज में महिलाओं पर शासन करने की शक्ति की स्थिति में हैं और उनका मानना है कि उन्हें महिलाओं पर अपनी इच्छा थोपने का अधिकार है। वे इस स्थिति को बनाए रखना चाहते हैं और उन महिलाओं को नियंत्रित करना चाहते हैं जिनसे वे संबंधित हैं। पुरुष शारीरिक हिंसा या शारीरिक हिंसा की धमकी का इस्तेमाल अपने साथी पर अपने नियंत्रण को स्थापित करने और फिर सुरक्षित करने के लिए करते हैं और उन्हें अधीनता और आज्ञाकारिता के लिए धमकाते और डराते हैं। टीबीई में। श्रीमती ब्रीडलोव सुबह–सुबह अपने नियमित रसोई के काम की देखभाल के लिए जाती हैं, और खाना पकाने के लिए कोयले की अनुपलब्धता से चिढ़ जाती हैं। जब वह अपने शराबी पति को जगाती है, तो ष्झगड़ा शुरू हो जाता है। ऐसा कभी–कभार ही नहीं, बल्कि लगभग हर रोज होता है। श्रीमती ब्रीडलवे को चोली ने बुरी तरह पीटा है। प्रतिदिन शारीरिक शोषण का शिकार होने के नाते, श्रीमती ब्रीडलोव षविशुद्ध रूप से स्त्रैण तरीके से – फ्राइंग पैन और पोकर्स के साथ से लड़ती है, जबकि चोली उससे लड़ती है जिस तरह एक कायर एक आदमी से लड़ता है – पैरों से, उसके हाथों की हथेलियों से , और दांत "। ष्पत्नी की पिटाईष् न केवल एक आदतन पालन है बल्कि पुरुषों में पाई जाने वाली एक बीमारी भी है जो उनके क्रोध और अन्य दबी हुई भावनाओं को दूर करने में सक्षम है। बामा के केयू में, शाम को जब वे अपने घर लौटते हैं तो दलित पुरुष नशे की हालत में अपनी पत्नियों के खिलाफ हिंसा करते हैं। बामा ऊदन नामक एक व्यक्ति को संदर्भित करता है, जो विशेष रूप से अपनी पत्नी को हर रोज

सार्वजनिक रूप से पीटने के लिए कुख्यात है। वह आदमी उसे उसके बालों से घसीटते हुए उनके आवासीय क्षेत्र के केंद्र में ले जाता है, और उस पर बेरहमी से बारिश करता है जैसे कि वह एक मोटी चमड़ी वाला जानवर हो। इस घरेलू नाटक में कोई भी हस्तक्षेप नहीं करता है और हर कोई असहाय रूप से दुखद दृश्य देखता है। उनके जीवन की त्रासदी यह है कि बहुधा पुरुष श्रेष्ठता का स्वांग रचकर पुरुष की असुरक्षा, पुरुष को महत्वहीन कारणों को पकड़ने के लिए प्रेरित करती है और तुच्छ कारणों को पीटने के लिए छोड़ देती है। उनके मामले में पत्नी की पिटाई एक पसंदीदा मनोरंजन के साथ–साथ पुरुष अधिकार स्थापित करने वाला कार्य भी बन जाता है।

साहित्य का मूल उद्देश्य

साहित्यकार समाज का चेतन और जागरूक प्राणी होता है। वह समाज के प्रभाव से अनभिज्ञ और अछूता न रहकर उसका भोक्ता और अभिन्न अंग होता है। इसलिए वह समाज का कुशल चित्रकार होता है। ... साहित्य समाज का दर्पण ऐसा कहने का अर्थ यही है कि साहित्य समाज का न केवल कुशल चित्र है, अपितु समाज के प्रति उसका दायित्व भी है।

साहित्य में समाज की विविध प्रकार की गतिविधियों का अंकन हुआ है। देश, राष्ट्र, समाज, जाति तथा विश्व की उन्नति में साहित्य का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। समाज में जो घटित होता है उसे ही साहित्यकार अपने साहित्य में चित्रित करता है । मानव जीवन से अलग साहित्य की कल्पना ही नहीं की जा सकती। साहित्य समाज के विभिन्न अंगों का, प्रवृत्तियों का विश्लेषण करता है और उन्हें सुरक्षित रखता है ।

लेखक सिर्फ अपने लिए ही नहीं लिखता । अपने समाज एवं आनंद के लिए लिखता है । आखिर लेखक समाज का एक अंग होता है, उसका लोककल्याण 'स्वान्त सुखाय' न होकर 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' बन जाता है । इस प्रकार साहित्य का मूल उद्देश्य सामाजिक जीवन पर प्रकाश डालना है ।

सामाजिक–चेतना

हिंदी दलित साहित्य के सर्वश्रेष्ठ महिला साहित्यकारों में से एक डॉ.सुशीला टाकभौरे ने अपनी कहानियों के मध्यम से दलितों की सामजिक, धार्मिक, आर्थिक,नैतिक और शैक्षिक चित्रण के साथ–साथ सवर्णों के प्रति अपने विद्रोह को स्पष्ट किया है। उनकी ज्यादातर कहानियाँ अंबेडकरी विचारों पर आधारित हैं। उनकी कहानियों में शोषकों से ही नहीं बल्कि अन्याय के खिलाफ आत्मकथात्मक एवं मनोविश्लेषणात्मक हैं। डॉ.सुशीला जी ने अपनी कहानियों में अपने विचार, जीवन की घटनाएँ तथा अनुभवों को प्रस्तुत किया है। दलित नारी मन के अंतद्वंद्व का चित्रण भी इन कहानियों का प्रमुख विषय रहा है। उनकी कहानियों में समाज में व्याप्त जतिभेद,शोषित, सामाजिक असमानता, सवर्ण–अवर्ण तथा छुआ–छूत की भावना और दलित समुदाय के पीडित व्यक्ति द्वारा भोगे हुए अनुभवों का कथन हैं।

इक्कीसवीं शताब्दी में हिन्दी साहित्य में दलित विमर्श ने एक महत्वपूर्ण स्थान बना लिया है। दलित साहित्य दलित लेखकों की आत्मकथाओं से प्रारम्भ होकर कविता के दौर से गुजरता हुआ कहानी के क्षेत्र में भी सशक्त उपस्थिति दर्ज करा रहा है। दलित विमर्श के पहले भी हिन्दी में प्रेमचन्द, निराला जैसे साहित्यकारों ने दलितों के जीवन से सम्बधित कहानियां लिखी। प्रेमचन्द की 'कफन' सद्गति ठाकुर का कुंआ तथा निराला की 'चतुरी चमार' इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय हैं।

कहानी के क्षेत्र में जिन दलित लेखकों ने अपनी उपस्थिति दर्ज की है उनमें ओमप्रकाश वाल्मीकी, सूरजपाल चौहान, दयानंद बटोही, डॉ. एन.सिंह, मोहनदास नैमिशराय, रजतरानी मीनू, अनीता भारती, सुशीला टाकभौरे आदि महत्वपूर्ण नाम है। इन्होंने कथा साहित्य से

दलित समाज में जागृति फैलाई है। इन सबसे हटकर सुशीला टाकभौरे का 'टूटता वहम' 'संघर्ष' 'अनुभूति के घेरे में कथा संग्रह व्यापक चर्चा का विषय रहे हैं।

'अनुभूति के घेरे' कहानी संग्रह में भूख', 'त्रिशूल', 'सांरग तेरी याद में', 'दिल की लगी', 'हमारी सेल्मा' 'गलती किसकी है', 'सही निर्णय', 'सूरज के आसपास', 'टुकड़ा–टुकड़ा शिलालेख' आदि कहानियां संग्रहित हैं। 'अनुभूति के घेरे' की सभी कहानियां नारी जीवन की समस्याओं पर लिखी गई हैं। जहां नारी मनुवादी के आधार पर क्षमा, त्याग, करूणा, ममता, दया, परोपकार आदि सद्भावों से परिपूर्ण आदर्श रूप है, जहां उनके अधिकार नहीं केवल कर्तव्य ही कर्त्तव्य हैं। इन कहानियां का उद्देश्य है, समाज को यह पता चले कि चुप रहने वाली सहनशील नारी के मन में कितनी वेदना होती है।

दूसरा कहानी संग्रह 'टूटता वहम' है जिसमें मेरा बचपन', 'झरोखे', 'मेरा समाज', श्टूटता वहम', 'मंदिर का लाभ', व्रत और व्रती, धूप से भी बड़ा आदि कहानियां संग्रहित हैं। टूटता वहम कहानी संग्रह में पिछड़ी दलित जाति से जुड़ी कहानियां हैं। इन कहानियों से पता चलता है कि समाज इतना आगे बढ़ जाने के बाद भी जाति का दंश दलितों के लिए आज भी बना हुआ है। "अब तो सब कुछ बदल रहा है, सवर्ण शूद्र के आपसी सम्बन्ध बदल रहे हैं, जो सवर्ण पहले छूने की कल्पना भी नहीं कर सकते थे वे अब शिक्षित सहकर्मी शूद्र अछूतों के हाथों में हाथ रखकर बातें करने लगे हैं। लेकिन फिर भी सवर्ण समाज के कुछ लोग अभी भी दलितों को अपने समान न मानकर वर्णभेद को किसी न किसी रूप में बनाए रखना चाहते हैं। इस कहानी संग्रह में समाज की ऐसी मानसिकता पर प्रहार किया गया है।

तीसरा कहानी संग्रह संघर्ष है, इसमें संघर्ष, जन्मदिन', छौआ मां', 'नई राह की खोज', 'संभव–असंभव', 'बदला, चुभते दंश, दमदार आदि कहानियां संग्रहित हैं। 'संघर्ष' कहानी संग्रह में दलितों के जीवन का संघर्ष चित्रित है।

कहानियों में व्याप्त सामाजिक विसंगतियों एवं समाधान

संघर्ष कहानी में शंकर को सहपाठी सवर्ण मित्र, मिलकर पीटते हैं। अवसर मिलने पर वह उससे बदला लेता है। शंकर के मन में आक्रोश उभरकर आता है तो शंकर चाहने लगता है कि– "उसके पास भी अमोघ शक्तियाँ हो जिससे वह अपनी दुश्मनों को आग में जलाकर भस्म कर दें, आँधी, तूफान द्वारा उन्हें आसमान में तिनकों की तरह उड़ा दे, प्रलय की बाढ़ में बहाकर मानव सभ्यता से दूर फेंक दे, उन सबको रस तल में पहुँचा दें।" 'टिल्लू का पोताश कहानी में बूढ़े किसान हरिसिंह को पता चलता है कि भंगिया –चमार जाति के हैं तो वह कुएँ के पानी खींचने नहीं देता। बदले में उन्हें जाति के नाम पर कुछ बोलने लगता है। उसे सुनकर कमला का सुर्ख चेहरा और आँखें अगांरों सी दहकने लगते हैं। कमला आक्रोश के साथ बच्चों को बाजूओं में पकड़ कर खींचते हुए आक्रोश में कहती है–चलों...ये पानी नहीं जहर है। अपने घर जाकर पीयेंगे...नहीं चाहिए आपका मीठा पानी..।

कमला का आक्रोश देखकर किसान हरिसिंह सहम जाता है। सोचने लगता है कि भंगिन इस तरह उसे बेइज्जत करती है।

प्राचीन काल से ही दलितों को अस्पृश्य या अछूत माना गया है। दलितों को सार्वजनिक कुएँ, तालाब से पानी लेना भी मना है, जबकि उस तालाब से जानवर तक पानी पीते थे। सवर्णों के घर के अदंर तो दूर, उनके मुहल्लों में चलने के लिए भी पाबंदी थी। भारतीय संविधान में अस्पृश्यता दूर करने का नियम बना है। लेकिन आज भी हमारे देश में छुआ–छूत की भावना कायम है।

सुशीलाजी श्जन्म दिनश कहानी में कहती है– "आजकल हर जघन्य बीमारी का इलाज संभव है। ऐसी बीमारी से पीड़ित या संसर्गपूर्ण रोग से पीड़ित रोगियों को भी लोग अपनों

ISSN -2393-8048, January-June 2018, Submitted in May 2018, iajesm2014@gmail.com
से अलग या बस्तियों से बाहर नहीं रखते हैं। मगर अस्पृश्यता ऐसी बीमारी है जिसका अभी तक उपाय संभव नहीं हो सका है। न साधु, संतों की वाणी से, न समाज सुधारकों के प्रयत्नों से, न अग्रेजों की मानवतावादी तर्कपूर्ण से देश की स्वतंत्रता से और न ही संविधान से।[8] यहाँ कहानीकार अस्पृश्यता को एक जघन्य बीमारी की तरह मानती है। उनके अनुसार आज की प्रगतिशीलता ने भी इसमें कोई परिवर्तन नहीं होने दिया है।

कथा–साहित्य में दलित–समाज और उसकी अस्मिता

भारतीय समाज व्यवस्था में शोषित पीड़ित–दलित और स्त्रियां हाशिए पर हैं। उनका साहित्य और उनका विमर्श भी हाशिए पर है। 'हाशिए का विमश' के माध्यम से हाशिए के जाति समुदायों की जागृति और जीवन–स्तर में परिवर्तन का संदेश देने का प्रयास किया है। इस समाज व्यवस्था में व्याप्त जातिभेद और लिंगभेद की विषमता से पीड़ित हाशिए के लोगों में व्याप्त जाति उत्पीड़न, विषमता का अपमान, छुआछूत धार्मिक अन्धविश्वास और सामाजिक बहिष्कार की प्रताड़ना की ओर संकेत किया है। 'दलित स्त्री और साहित्य लेखन' में लेखिका ने दलित समाज की स्त्री के साथ हो रहे अन्याय और अत्याचार को दर्शाया है साथ ही दर्शाया है कि जितना साहित्य में पुरुषों को दबदबा है उससे बहुत कम महिलाओं का, एक महिला ही महिला की बेबसी को समझ सकती है एक पुरुष नहीं। साहित्य लेखन में महिलाओं को भी आगे आना चाहिए। 'नारी के दोहरे जिम्मेदारी कब तक' इसमें लेखिका ने नारी के दोहरे जीवन का विवरण किया है। एक नारी घर और बाहर की जिम्मेदारी कब तक उठाती रहेगी। पुरुषों को भी अपनी जिम्मेदारी समझनी चाहिए। 'नारी दलित क्यों और कब तक' लेख में लेखिका ने नारी के शोषण को दर्शाया है। नारी नौकरीपेशा है तब भी उसका शोषण हो रहा है और वह उस शोषण को नजर अंदाज कर रही है। नारी को अपने हक के लिए लड़ना चाहिए।

उसको सबल बनना चाहिए। टाकभौरे जी का पति के सामने चुप रहना, पिटना, दलित महिला का दब्बूपन है लेकिन अम्बेडकर का प्रभाव ही है कि वह शिक्षित होकर न केवल नौकरी करती है अपितु लेखन के द्वारा महिला के दबे सुर को बुलन्द करती हुई पति का सामना करती है, पुरुषसत्ता को चुनौती देती है। इसी संदर्भ में मृदुला गर्ग कहती हैं–"पुरुष को दांत से खिंचकर खून पीना फेनिजम नहीं है। मेरी ऐसी सोच कतई नहीं। खुद स्त्री सोचने और कार्य करने में सक्षम है। यही उसको साबित करना चाहिए।[8] नारी को अपने बराबरी के हक के लिए लड़ना होगा। श्स्त्रियों के उत्थान में डॉ. अम्बेडकर का योगदान' में लेखिका ने डॉ. अम्बेडकर के योगदान को दर्शाया है। अम्बेडकर ने दलित नारी हो चाहे सवर्ण नारी सब के उत्थान के लिए प्रयास किया है। नारी खुद भी साहस करे तभी समाज के सामने अपने हक के लिए लड़ सकती है। स्त्री–पुरुष की समानता के बारे में समाज को जागरूक होना होगा। "वस्तु स्थिति यह है कि पुरुष स्त्री के कुछ विशेष प्रकार के आदर्शों, मुल्यों नैतिकताओं गुणों की अपेक्षाएं रखता है जो की पैतृक है। जिनका लक्ष्य है स्त्री को नियन्त्रित करना एवं यथास्थिति में जीने का एहसास कराना। पुरुषों ने हमेशा ही ऐसी पितृक नैतिकताएं उस पर थोपी है।[8] समाज में अपनी जगह बनाने के लिए नारी को स्वयं लड़ना होगा। अपनी अस्मिता की रक्षा करनी होगी।

यह वेदना हजारो वर्षों की है। यह वेदना सिर्फ मैं की नहीं समूचे समाज की वेदना है। इसलिए सामाजिक यथार्थ दलित विमर्श का प्रमुख स्वर है।

दलित विमर्श की दुनिया में दलित साहित्यकारों में ओमप्रकाश वाल्मीकि, हरपाल सिंह अरूष, मोहनदास नैमिशराय, अनिता भारती, कौशल्या बैसन्त्री, शरण कुमार लिम्बाले, डॉ. रजतरानी, कंवल भारती, सुशीला टाकभीरे आदि नाम आते हैं। इन दलित साहित्याकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से दलित विमर्श पर जांच–पड़ताल करके अपनी उपस्थिति दर्ज कराई है। दलित विमर्श में इन सबका स्थान महत्वपूर्ण है। दलित विमर्श जितना पुरुषों का

लेखन है उसमें स्त्री लेखन बहुत कम है। गिने चुने ही दलित स्त्री लेखन में नाम आते हैं। जिसमें सुशीला टाकभौरे का नाम भी प्रमुख रूप से आता है।
अब तब उनकी कई पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं. जिनमें चार कविता संकलन, दो नाटक संकलन, तीन कहानी संग्रह और तीन समीक्षात्मक पुस्तकें और एक आत्मकथा का प्रकाशन हो चुका है।
हिन्दी के दलित साहित्य में जिन महिला रचनाकारों ने दलित और स्त्री विमर्श के लिए जमीन तैयार की उसमें टाकभौरे का सक्रिय हस्तक्षेप रहा। वे लम्बे समय से कविता, कहानी, उपन्यास, विचारात्मक लेख, आत्मकथा जैसी विधाओं में अपनी रचनात्मकता का परिचय दे रही हैं। 1970 में अम्बेडकरवादी चेतना के प्रभाव से दलित साहित्य की जो अलग पहचान बनी उसमें स्त्री स्वर को बहुत गंभीरता से नहीं लिया गया। नब्बे के दशक में यह स्थिति बदली और पत्र–पत्रिकाओं में दलित स्त्री रचनाकारों ने अपनी उपस्थिति के महत्व का एहसास कराया। स्त्री साहित्य के इस उन्मेष में सुशीला टाकभारे साहित्य की सभी विधाओं में, एक महत्वपूर्ण नाम बनकर उभरी किन्तु जितनी चर्चा उनकी आत्मकथा 'शिंकजे का दर्द तथा उनके कहानी संग्रहों की हुई है उतनी अन्य विधाओं की नहीं हुई है। यह वेदना हजारो वर्षों की है। यह वेदना सिर्फ मैं की नहीं समूचे समाज की वेदना है। इसलिए सामाजिक यथार्थ दलित विमर्श का प्रमुख स्वर है।
दलित विमर्श की दुनिया में दलित साहित्यकारों में ओमप्रकाश वाल्मीकि, हरपाल सिंह अरूष, मोहनदास नैमिशराय, अनिता भारती, कौशल्या बैसन्त्री, शरण कुमार लिम्बाले, डॉ. रजतरानी, कंवल भारती, सुशीला टाकभीरे आदि नाम आते हैं। इन दलित साहित्याकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से दलित विमर्श पर जांच–पड़ताल करके अपनी उपस्थिति दर्ज कराई है। दलित विमर्श में इन सबका स्थान महत्वपूर्ण है। दलित विमर्श जितना पुरुषों का लेखन है उसमें स्त्री लेखन बहुत कम है। गिने चुने ही दलित स्त्री लेखन में नाम आते हैं। जिसमें सुशीला टाकभौरे का नाम भी प्रमुख रूप से आता है।
अब तब उनकी कई पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं. जिनमें चार कविता संकलन, दो नाटक संकलन, तीन कहानी संग्रह और तीन समीक्षात्मक पुस्तकें और एक आत्मकथा का प्रकाशन हो चुका है।

उपसंहार

इस प्रकार सुशीला टाकभोरे जी ने "नीला आकाश" में दलित जीवन का यथार्थ सामने रखा है ! दलित शोषण उत्पीड़न और आभावपूर्ण जीवन जीते आ रहे है ! आज भी इनके घर गाँव दूसरे छोर पर ही होते है ! जहाँ सुविधाओं का अभाव रहता ही है ! शिक्षा इनके जीवन में नहीं होती है ! अगर कोई लेना भी चाहे तो सवर्ण लोगों की मानसिकता के शिकार होकर रह जाते है ! या तो उनकी बेटियों के साथ दुष्कर्म किया जाता है, या फिर उसे मौत के घाट उतार दिया जाता है ! यदि वह इसके खिलाफ बोलना भी चाहे तो सवर्णों का बोल बाला चारों तरफ ही रहता है! पुलिस भी उन्हीं के इशारो पर चलती है ! इन बेचारों की कहीं भी सिफारिश नहीं होती है इन्हें अपने पैतृक काम करने के लिए मजबूर किया जाता है ! यदि वे आगे बढने की भी सोचें तो इन्हें धमकी दि जाती है ! आज कई उपन्यासों , कहानी था कविताओं के माध्यम से इन रचनाकारों ने अपने समाज की स्थिति को समाज के सामने रखने का प्रयास किया है !

आधार ग्रंथ सूची

1. डॉ. कुसुम वियोगी, दलित महिला कथाकारों की चर्चित कहानियाँ, पृ. 22
2. अनुभूति के घेरे (कहानी संग्रह) प्रथम संस्करण, शरद प्रकाशन, नागपुर 1997, द्वितीय संस्करण नेहा प्रकाशन।
3. कैदी नं. 307 (सुधीर शर्मा के पत्र) प्रथम संस्करण, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2017

4. टूटता वहम् (कहानी संग्रह) प्रथम संस्करण, शरद प्रकाशन, नागपुर 1997, द्वितीय संस्करण अनिरूद्व बुक्स।
5. जरा समझो (कहानी संग्रह) प्रथम संस्करण, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015 तुम्हें बदलना ही होगा (उपन्यास) प्रथम संस्करण, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015
6. तुमने उसे कब पहचाना (काव्य संग्रह) प्रथम संस्करण, शरद प्रकाशन, नागपुर, 1995,द्वितीय संस्करण, स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली।
7. दलित साहित्य रू एक आलोचना दृष्टि प्रथम संस्करण ा, शिल्पायन प्रकाशन, नई दिल्ली , 2015
8. दलित लेखन में स्त्री चेतना की दस्तक, प्रथम संस्करण, अक्षर शिल्पी दिल्ली, 2017
9. नंगा सत्य (नाटक) प्रथम संस्करण, शरद प्रकाशन, नागपुर 2007, द्वितीय संस्करण, शिल्पायन दिल्ली, 2015
10. नीला आकाश (उपन्यास) प्रथम संस्करण, विश्व भारती प्रकाशन, नागपुर 2013
11. परिवर्तन जरुरी है (लेख संग्रह) प्रथम संस्करण, शरद प्रकाशन, नागपुर, 1996, द्वितीय संस्करण, हाशिए का विमर्श, नेहा प्रकाशन, शाहदरा, दिल्ली।
12. मेरे साक्षात्कार (साक्षात्कार सूची) प्रथम संस्करण शिल्पायन प्रकाशन, नई दिल्ली 2016

SHRADHA EDUCATIONAL ACADEMY